शारदा भित्ति पत्रिका

संरक्षक

प्रो.संजीव जैन

माननीय कुलपति

जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय

त्रैमासिक शारदा भित्ति पत्रिका

वर्ष 2025, अंक-9

{जनवरी-मार्च}

परामर्शदाता

प्रो.भारत भूषण

विभागाध्यक्ष

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

प्रधान संपादक

डॉ.शशिकांत मिश्र

सह-आचार्य

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

संपादक

वैष्णवी त्रिपाठी(शोधार्थी),विक्रम सिंह(शोधार्थी)

पत्रिका में प्रस्तुत रचनाओं एवं आगामी अंक हेतु सुझाव के लिए

संपर्क सूत्र दूरभाष - 9030963026(डॉ.शशिकांत मिश्र)

ज्ञान और कौशल साधना का महापर्व : चैत्र नवरात्र

भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक तथा वैज्ञानिक महत्व रखने वाली नवरात्र का इतिहास शाश्वत तथा चिरंतन है। यह नवरात्र प्रति वर्ष दो बार चैत्र और शारदीय नवरात्र के रूप में मनाई जाती है। चैत्र नवरात्र में सिद्धि, साधना और समर्पण की स्तुति होती है। सच्चाई तो यह है कि वर्तमान का युग ज्ञान और कौशल का युग है। जब एआई (आर्टिफिसियल इंटेलिजेंस) और मनुष्य की बौद्धिक क्षमताओं के बीच द्वन्द्व मंचा हो, मशीनें और टेक्नोलाजी, ट्रेडिशनल वर्क स्टाइल को चैलेंज कर रही हों और जीवन शैली में मशीनों का इस्तेमाल बढ़ रहा हो तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि मानवीय क्षमताओं की क्या उपयोगिता रह जायेगी? आज आधुनिक तकनीकें, मशीन और बौद्धिक क्षमताओं के अस्तित्व पर चिंतन और बहस जारी हैं।

इसी परिप्रेक्ष में हमें मनुष्य और तकनीकी के बीच के अंतर को समझना होगा। इन सारे बदलावों के पीछे मनुष्य की गहरी सोच और ज्ञान ही तो है! इसी चिंतन शक्ति, कौशल और ज्ञान की देवी मां दुर्गा हैं, जो शक्ति की महादेवी हैं तो साधना की आराध्य देवी भी, तब मनुष्य को मिले ईश्वरीय वरदानों और क्षमताओं के सम्मुख सारी चिंताएं अर्थहीन दिखायी देती हैं, क्योंकि शरीर रूपी संरचना में उन शक्तियों का वास है जो ज्ञान से मिलता है, इसलिये ज्ञान और कौशल पर जितना निवेश करेंगे, हमें उतने अधिक लाभ मिलेंगे।

देवी सरस्वती के रूप में विद्या, मां लक्ष्मी के रूप में धन और वहीं दुष्ट शक्तियों के नाश के लिये मां काली की आराधना की जाती है। इन शक्तियों की दात्री मां दुर्गा हैं। इसी प्रकार शक्ति स्वरूपा मां जगदम्बा तथा मां शारदा की कृपा से कई साहित्यिक विभूतियों का जन्म संभव हो सका है। मां शारदा की वीणा से निकले स्वर के श्रवण से कई मूक भी वाचाल बन गये हैं तथा उनके हृदय सागर से कई कविताओं की धारा बह गई है। हमारे जम्मू-केंद्रीय विश्वविद्यालय के नव पल्लवित कवियों ने विश्वविद्यालय द्वारा निरंतर प्रकाशित भित्ति पत्रिका 'शारदा' को नवकलेवर प्रदान किया है। इन नव अंकुरित कवियों को भित्ति पत्रिका 'शारदा' के माध्यम से एक मंच प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति तथा पत्रिका के संरक्षक प्रो. संजीव जैन जी का प्रोत्साहन हमें हमेशा मिलता रहा है। इन महान सर्जकों को निरंतर नयी-नयी रचनाएँ सृजित करने हेतु प्रेरणा प्रदान करने में हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग के विभागाध्यक्ष प्रो. भारत भूषण जी का योगदान भी स्तुत्य है।

'शारदा' भित्ति पत्रिका के इस जनवरी-मार्च, 2025 अंक के लिए रचनाएँ एकत्रित कर पत्रिका को सुंदर कलेवर प्रदान करने वाले पत्रिका के संपादकों शोधार्थी वैष्णवी त्रिपाठी और विक्रम सिंह को विशेष बधाई। पाठकों के लिए प्रस्तुत है इन नवोन्मेषशालिनी प्रतिभाओं की लेखनी से निकली श्रेष्ठ रचनाएँ।।

डॉ. शशिकांत मिश्र
प्रधान संपादक

माँ शारदा (गीत)

माँ शारदे!, माँ शारदे!
वागेश्वरी विद्या अपार दे
तू अनंत ज्योति, अनंत बोध
तू सत्य अर्जन का हित शोध
तू आत्मशुद्धि, आत्मबोध
ध्वस्त तुझसे सब अवरोध
माँ शारदे!, माँ शारदे!
जड़ चेतना संवार दे
माँ शारदे!, माँ शारदे!
वागेश्वरी विद्या अपार दे
प्रत्येक तत्व में तू विराजे
तुझसे ही हर तान साजे
बिना तेरी स्तुति साधे
हर वाद्य, गीत, नृत्य आधे
माँ शारदे!, माँ शारदे!
विकृत स्वर सम्भार दे
माँ शारदे!, माँ शारदे!
वागेश्वरी विद्या अपार दे
शांत तुझसे सब क्षति
करुणा रूपेण माँ भगवती
जिस उर श्रद्धा तेरे प्रति
वह सुनम्य, वृहत् हो अति
माँ शारदे!, माँ शारदे!
शुभता सदा प्रसार दे
माँ शारदे!, माँ शारदे!
वागेश्वरी विद्या अपार दे...
माँ शारदे!, माँ शारदे....

डालेश शर्मा
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

ले उडारी भावनाओं की

ले उडारी भावनाओं की
मस्त पंखों से भर उड़ान
आसमाँ को छूलो तुम, तुम हो इस देश की
आन, बान और शान
न हो कोई ग़म सदा रहे होठों पर मुस्कान
अपनी विरासत को संजो लो तुम
विकास का है यह आह्वान
जीवन पथ हो उन्नतशील
यही हमारा भी है आह्वान
रास्ते हों चाहे कठिन लेकिन कस लेना तुम
कमान आ रही बाधाओं का, ऊर्जा तीर से कर
लेना! तुम संधान!
पा लेना जो चाहो तुम
माँ भारती का करना गुणगान
अपना विकास देश का विकास अपने पूर्वजों
के संस्कारों का, यही है पुण्य यही है दान
कर लेना इसे पूर्ण उन्हें भी होगा तुम पर मान
लो अब सिर्फ सुनते क्यों हो तालियाँ कर दो
गुंजायमान
ताली पर ताली दे दो तुम अपने हित युवा
शक्ति हो देश की,
अपने पर गर्व करो तुम चलो सद् पथ पर,
राहों की कठिनाइयों को कर लो आसान
एकजुटता का पढ़ो पाठ जीवन हो प्रकाशमान
उज्ज्वल भविष्य की कर कामना
लो विराम लेते हैं
बढ़ जाओ उन्नति पथ पर लेकिन याद रखना
मेरा भारत है महान, मेरा भारत है महान, मेरा
भारत है महान…
जय हिंद!

डॉ. वन्दना शर्मा
सहायक आचार्य
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

समर्पित

जीवन के हर भव-बंधन को
माँ तुम्हें समर्पित करता हूँ।।
निज मलिन बुद्धि के तुच्छ शब्द
माता मैं अर्पित करता हूँ।
हे ! आदिशक्ति माँ सरस्वती,
बुद्धि-विवेक की दाती ।
माँ नाद रूप में तुम्हीं व्याप्त हो,
कण-कण में मुस्काती ।।
विद्या-संगीत हैं तुमसे ही,
है ज्ञान-उजाला पाया ।
तुम मेधा, कंठ वा जिह्वा में,
फिर भी क्यों हूँ भरमाया ।।
मेरी ही युक्ति, मेरी ही शक्ति,
मुझमें ही यह सब आया ।
क्या सच में है केवल मेरा,
नहीं है तुमसे ही पाया ।।
हे स्वर-शब्द की अधिष्ठात्री!,
अब देवी भगवती दया करो ।
जड़ बने मोहवश कलुष हृदय में
हे माँ शारदे ! वास करो...

शिवम्
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

मैं सीता सी
(अवधी कविता)

मैं सीता सी, अगिनि के ज्वाला,
धर्म-नीति के रहिन उजाला।
रावन के लंका जरत रहय,
सतयुग साँच गूँजात रहय।
मरजादा के मान बचाई,
सहिके दुख हर बात निभाई।
साँच के जोती हम जलवाइन,
हर युग मा हम परखि गइन।
प्रेम के मूरत, बिसवास के जोती,
राम चरन मा अर्पित होती।
त्याग से जग मा जोत जगाई,
फिर भी दुख-दर्द हम पाई।
मइया के ममता, स्नेह बहाई,
संतान खातिर हर ग़म खाई।
सपना संजोई, आस लगाई,
पर दुनिया नाहीं मोह बुझाई।
युग बदले, पर हाल न बदला,
सीता के हर युग मा छलवा।
हर बार परख, हर बार पीरा,
कब तक सही हम युग के लकीरा?
अब ना परख, ना अपमान होई,
नारी के अब सम्मान होई।
श्रद्धा, शक्ति, सहस के रूप,
अब हर युग मा पाई स्वरूप।
मान है मेरा मैं, मैं सीता सी,
आजहु नारी के भीतर जिन्दा,
धरती पे जन्मी, धर्म की जननी,
मैं सीता सी, अपनी जननी।
मैं सीता सी, अपनी जननी।

डॉ. अमिता गुप्ता
सहायक आचार्य
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केंद्र

घर और आज़ादी

सुबह होते ही दिल करता है, कहीं दूर निकल जाऊँ,
तेज़ कदमों से भागूँ, खुले आसमान में उड़ जाऊँ।
ये ऊँची मीनारें, बहती नदियाँ, शांत पहाड़, गहराते समंदर,
सब कुछ देखूँ, सब कुछ महसूस करूँ,
बस इस एक पल में पूरी दुनिया जी लूँ।

मेरा मन भी कुछ यूँ ही मचलता है,
जैसे मेरी गाय की आँखों में सुबह एक चमक होती है।
रस्सी से बंधी, मगर दिल में एक बेचैनी,
जब मैं उसकी रस्सी खोलता हूँ,
वो पागलों की तरह कूदती, भागती, झूमती है।
मस्ती में सरपट दौड़ती है, जैसे अब कोई रोक नहीं,
अब कोई बंधन नहीं, बस आज़ादी है—
खुला आकाश, खुली धरती,
न कोई चिंता, न कोई ठिकाना।

पेड़ों पर बैठे पंछी भी तो यही करते हैं,
सूरज की पहली किरण के साथ गूँज उठते हैं,
अपने घोंसलों से फुर्र हो जाते हैं,
कभी खेतों में, कभी बिजली की तारों पर,
कभी आसमान की असीम ऊँचाइयों में।
हवा संग बहते, लहरों से खेलते,
ऐसा लगता है, जैसे इस बार लौटेंगे नहीं,
जैसे ये दुनिया ही अब उनकी है,
जैसे हर दिशा में उनका ही बसेरा है।
पर शाम ढलते ही,

गाय खुद लौट आती है अपने खूँटे के पास,
बिना किसी रस्सी के, बिना किसी ज़बरदस्ती के।

सुबह जो जितनी चंचल थी,
अब उतनी ही शांत, निश्चल, स्थिर।
क्या उसका मन भर गया?

या यह आज़ादी उतनी सुंदर नहीं थी, जितनी
उसने सोची थी?

वही पंछी भी तो वापस लौट आए,
अपने छोटे-से घोंसले में,
जहाँ दिनभर की उड़ानों के बाद चैन मिलता है।
किसी ने उन्हें रोका नहीं,
फिर भी वे लौट आए, अपनी ही दुनिया में।
पर मैं?
मैं भी निकला था घर छोड़कर,
आज़ादी की तलाश में,
नई जगहें, नए लोग, नई कहानियाँ बुनने।
मुझे भी मिले नए दोस्त,
जैसे गाय को मिले, जैसे पंछियों को मिले।
पर अब वे सब कहाँ हैं?
क्या मैं भी लौट आऊँ?
क्योंकि…

अब मन घर की ओर खिंचता है,
पर उस शाम का इंतज़ार है,
जो अब तक नहीं आई.....

विक्रम सिंह
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

संघर्षों के बाद का उजाला

जब रास्तों में छाई थी धुंध और अंधकार,
हर कदम लगता था बोझिल, हर सपना धुआँधार।
तब भी दिल में कहीं एक उम्मीद का दीप जलता रहा,
संघर्षों के दरिया में, मैं ख़ुद को ढूँढता चला।

वक़्त ने दीं ठोकरें और हौसला आज़माया,
हर बार गिरा मैं, पर हर बार खड़ा हो गया।
जिन राहों पर दर्द मिला, वही कहीं प्यार मिला,
इन मुश्किलों में मैंने अपना सच्चा सार पाया।

ख़ुद से अनजान था मैं पहले, खो गया था शोर में,
दुनिया के झूठे पैमानों में, भटक रहा था छोर में।
पर जब टूटा आईना, जिसमें देखा,
मैं पराया,
तब खुद के चेहरे को सच्चाई में पाया।

नजरें बदल गई, बदला खुद को देखने का नज़रिया,
हर आँसू ने एक नयी कहानी लिखी, हर दर्द ने
आकार गढ़ा।
अब न दुश्वारी है संघर्ष, न मुश्किल कोई जाल,
ये सब मेरे हमसफ़र बने, बदल दिया मेरा हाल।
रातों की नींदें टूटी, लेकिन सपने जाग उठे,

संघर्षों के ये पल, जीवन के नए गीत रचते।

मैंने सीखा हार से, हर मोड़ पर जीत का मज़ा,
संघर्षों के बाद आई ख़ुद की खोज, एक नया सवेरा।

अब मैं वो नहीं, जो कभी था, एक नया इंसान हूँ,
वक़्त के साथ बहा नहीं, मैं खुद की पहचान हूँ।
अंधेरों से जो लड़ा, उसने सूरज को करीब पाया,
संघर्षों में मैं खुद को सचमुच समझ पाया।

अब रास्ते खुले हैं, आसमान साफ़ है,
संघर्षों की तपिश ने मुझे एक नई आग दी है।
मैं अब अपने सपनों का राही हूँ, मंज़िल पास है,
खुद को पा लिया मैंने, और जीवन का हर एहसास है।

- दीक्षा जसरोटिया
शिक्षार्थी,अंग्रेजी विभाग

ज़िन्दगी

ऐ ज़िन्दगी तुझे क्या कहूँ?
तुझे ज़मीं कहूँ या आसमाँ कहूँ?
या दिन कहूँ या रात कहूँ,
या चांदनी कहूँ,
या बे-मौसम बरसात कहूँ,
या उगते हुए सूरज की धूप कहूँ,
या पेड़ की छाँव कहूँ,
या बचपन कहूँ या बुढ़ापा कहूँ
या फूल कहूँ या काटें कहूँ
या पल पल याद दिलाने वाली यादें कहूँ
या कहूँ गुमनाम तुझे या प्रसिद्धी कहूँ
या ख़ुशी कहूँ या उदास कहूँ
या जीवन जीने की आस कहूँ
या पानी की प्यास कहूँ
या बीती बात कहूँ
या फिर जीवन का आज कहूँ
या जीवन का उदय कहूँ
या बुझता हुआ चिराग कहूँ
या तुझको अभिशाप कहूँ
या जीवन का वरदान कहूँ
ऐ ज़िन्दगी तुझे क्या कहूँ?

ऋषि यादव
जनसंचार एवं नवीन मीडिया
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय

आगे बढ़ना है...कुछ करना है...

मंजिलें हज़ार हैं,पर एक ही राह पर चलना है,
बहुत सी ठोकर लगेगी
इन्ही राहों पर और बहुत बार गिरना है
जब मन में है आस,
और सामने है मंजिल तो मन से कहो,
तुझे आगे बढ़ना है, बहुत कुछ करना है
बहुत से लोग आयेंगे, बहुत से लोग
कहेंगे और सुनायेंगे
लेकिन जब मन में है विश्वास
तो पीछे क्यों रहना है,
क्योंकि आगे बढ़ना है, कुछ करना है।
जब मंजिल हो सामने तो क्यों डरना है,
मन से कहो, आगे बढ़ना है, कुछ करना है।
दुनिया क्या कहेगी, यह सोचना छोड़ना है
क्योंकि मुझे जो करना है, वही मन में रखना है,
इसलिए मुझे आगे बढ़ना है, कुछ करना है।

आरती गुप्ता
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

मेरा-मेरा न कर बंदे

एक दिन यही सब रह जाएगा!
सोना-चांदी, महल-अटारी,
रह जाएगी सारी की सारी।
हाथ खाली आया था।
खाली हाथ जाएगा।

मेरा-मेरा न कर बंदे,
एक दिन यही सब रह जाएगा!

नाम तेरा भी मिट जाएगा,
तेरा निशां भी खो जाएगा।
कल जो तेरा ताज था,
वो किसी का आज है।

जो हंसते थे तेरी गली में,
वो चेहरे भी बदल जाएंगे।
तेरी तस्वीर पर रखे फूल,
कुछ दिन में ही मुरझा जाएंगे।
मेरा-मेरा न कर बंदे,
एक दिन यही सब रह जाएगा!

जो तेरा था, तेरा न होगा,
जो तेरा दिल था, बेगाना होगा।
रिश्ते-नाते, प्यार-दुलार,

सब बस यादें बन जाएंगे।

कर ले भक्ति राम की,

पा ले कृपा घनश्याम की।
सांसों की यह डोरी टूटी,
तो बस रह जाएगी निष्काम की।

तेरा शरीर है बस एक छाया,
सच्चा नाम ही तेरी माया।
हरि भजन में मन लगा ले,
वरना व्यर्थ जाएगी काया।
नेकी कर, सुमिरन कर,
कर्म की ज्योत जलाए जा।
मिट्टी के इस तन के अंदर,
बस नाम ही साथ निभाएगा।

मेरा-मेरा न कर बंदे,
एक दिन यही सब रह जाएगा!

विक्की
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

खुद की खोज

बचपन से जो सुना, वही करती रही,
दूसरों की सोचों में खुद को गढ़ती रही।
ख़्वाब थे अपने, पर आवाज़ न मिली,
जिंदगी की किताब में, वो पन्ने उलटती रही।

फिर एक दिन खुद से मिलने चली,
आसमान के नीचे, धरती पर पली।
हर कदम पर सवाल थे, हर मोड़ पर डर,
पर दिल के भीतर था सच्चाई का घर।
सफर आसान नहीं था, काँटे भी थे,
पर उसके अंदर नए सपने भी थे।
वो टूटी नहीं, वो झुकी नहीं,
दुनिया के सामने वो रुकी नहीं।

समझी जब उसने अपनी बात,
हर गलती से सीखा, हर चोट से सबक लिया साथ।
अब वो औरों की नहीं, अपनी राह चुनती है,
खुद के बनाये रास्ते पर, खुद को ढूँढती है।

अब वो नदी की धारा-सी बहती है,
अपने अस्तित्व में खुद को कहती है।
बाहरी शोर नहीं, भीतर की आवाज़ है,
अब वो खोई नहीं, पूरी तरह आज़ाद है।

हर मुश्किल में उसने रास्ता पाया,
खुद की रोशनी से अंधेरा हटाया।
वो लड़की नहीं, अब एक नारी है,
जिसकी दुनिया में सिर्फ उसकी सवारी है।

खुद से जो प्रेम सीखा,
वहीं था उसकी खोज का चेहरा।
अब न कुछ पाना, न कुछ खोना,
उसकी मंजिल है बस खुद का होना।

दीक्षा जसरोटिया
शिक्षार्थी, अंग्रेजी विभाग

इस बार जीत कर आना है

माना अब तक कुछ हो न सका
तू हार गया लेकिन न थका
बीते हर रण से सीख तुझे
इस बार ये ध्वज फहराना है
ये युद्ध तेरा है और तुझे
इस बार जीत कर आना है

केवल एक धर्म का ध्यान रहे
अपने पौरुष पर मान रहे
चलते रहना, चलते रहना
अमरत्व तुझे दिखलाना है
ये युद्ध तेरा है और तुझे
इस बार जीत कर आना है

जो छूट गए कब अपने थे
वो कल के टूटे सपने थे
उन सपनों से आगे तुझको
अब और बहुत कुछ पाना है
ये युद्ध तेरा है और तुझे
इस बार जीत कर आना है

ये हाल बदलना संभव है
अंधियारा ढलना संभव है
जो कुछ अपने से बड़ा लगे
सब कुछ संभव कर जाना है

ये युद्ध तेरा है और तुझे
इस बार जीत कर आना है

देवांश उपाध्याय

सवैया

कोमल हाथन से अपने इत गोरी
पिया को गुलाल लगावत।
हाथ पड़ी जो अबीर की झोरी से
लै चुटकी भर भाल लगावत।
अंतर में भय व्यापत है, कहीं देख न
ले कोई गाल लगावत।
रंग अनेक दिखे जग में पर
साजन को वह लाल लगावत।

है चहुँ ओर गुलाल अबीर
बिना पी किसी को लगाऊँ तो कैसे?
गोरी बिना दिन सून लगे पर
गोरी के पास मैं जाऊं तो कैसे?
साजन है परदेश पड़ा फिर
आपन हाल सुनाऊँ तो कैसे?
गोरी के कोमल हाथन वाले
गुलाल को गाल पे पाऊं तो कैसे?

हर्षित तिवारी
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

कवित्त

मन नहि लगत करेज धरकत मोर, धरक धरक
फगुनहट बयार में।
जियरा बेचैन जो खसम परदेश बाटे, लगत बदन
मोर जरत अंगार में।
देवर सतावे बरजोरी बतियावे मोसे, बूझत न हाल
ऊ बसन्त के खुमार में।
खेलन को सजन के साथ में गुलाल रंग तरसत बाटे
मोर बदन बहार में।

हर्षित तिवारी
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

विश्वगुरु भारत का संकल्प

वेदों की गूँज सुनाने, धर्म का दीप जलाने आया हूँ,
राम, कृष्ण की वाणी से, सत्य का मार्ग दिखाने आया हूँ।

अर्जुन की साधना जागे, कर्ण का दान जगाने आया हूँ,
परशुराम के ज्ञान से, भारत को फिर सिखाने आया हूँ।
गुरु वशिष्ठ की वाणी से, फिर से तेज भराने आया हूँ,
द्रोण, कृपाचार्य की शिक्षा, हर मन में बसाने आया हूँ।
बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य का संदेश सुनाने आया हूँ,
विवेकानंद की ललकार से, भारत को फिर जगाने आया हूँ।

गीता के श्लोक सुनाकर, कर्म की राह दिखाने आया हूँ,
कर्ण की साधना से, त्याग का अर्थ बताने आया हूँ।

सुभाष, भगत की ज्वाला से, फिर रणभेरी बजाने आया हूँ,
अशोक, चाणक्य की नीति से, भारत को फिर उठाने आया हूँ।

राम के आदर्शों को फिर, हर हृदय में जलाने आया हूँ,
कृष्ण की मुरली की धुन से, प्रेम का गीत सुनाने आया हूँ।
अर्जुन की दृढ़ता से, हर मन को शौर्य सिखाने आया हूँ,
परशुराम के परशु से, अन्याय मिटाने आया हूँ।

विश्वगुरु का गौरव लौटे, यह संकल्प उठाने आया हूँ,
भारत की इस पुण्य धरा पर, ज्ञान दीप जलाने आया हूँ।
शांति, प्रेम, सत्य-अहिंसा, इनका पाठ पढ़ाने आया हूँ,
फिर से जग में गूँजे जयघोष, यह मंत्र सुनाने आया हूँ।

अमन कुमार चौधरी
विद्यार्थी
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केंद्र

एक पत्थर की कहानी

एक पत्थर पड़ा राहों में,
धूप, बरसात, आंधी सहता,
मौसम आते, मौसम जाते,
पर वह वहीं अडिग ही रहता।

कभी तपती धूप जलाती,
कभी बारिश भिगो ही देती,
फिर ठंडी बयारें आकर,
उसके घावों को सुखा देती।

ना डरता वह जलन से,
ना कांपता बरसातों में,
सर्दी के अच्छे मौसम में,
ना की थी कोई फरियादों में।

तो फिर अब क्यों रोए वह,
जब बुरे दिन पास आए,
जो सह लेता हर तूफान,
वह पत्थर क्यों घबराए?
लोग कुचलते, ठोकर मारें,

फिर भी न हिलता अपनी जगह,

सीखा उसने वक्त से,
सहना ही है जीवन सदा।

हम भी बनें उस पत्थर जैसे,
जो हर हाल में अडिग रहे,
बुरा समय जब आए तो,
हम भी डटकर खड़े रहें।

तन्वी बड़याल
विद्यार्थी, अंग्रेजी विभाग

मैं इस घर से प्यार करता हूँ

इस टूटे फूटे छत से
वो बाहर पड़ी पुरानी चारपाई से
वो आँगन में लगे पेड़ से
वो उस पेड़ की छाँव से
वो गली से, चौबारे से, खिड़की से
वो पुराने यारों से
वो बड़ों की मार से
वो आम के अचार से
वो उस पुराने तालाब से
वो तालाब के साथ वाले उस पुराने मकान से..
जहां रहता है कोई मेरे नाम से...
मैं करता हूँ प्यार उस मिडल स्कूल वाली आधी -----छुट्टी
बैट के नाम पे हुई उस लड़ाई से...
हाँ!! मैं नहीं करता हूँ इस शहर से
मुझे प्यार है बस तो बस अपने गाँव से!!

साहिल, शोधार्थी
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केंद्र

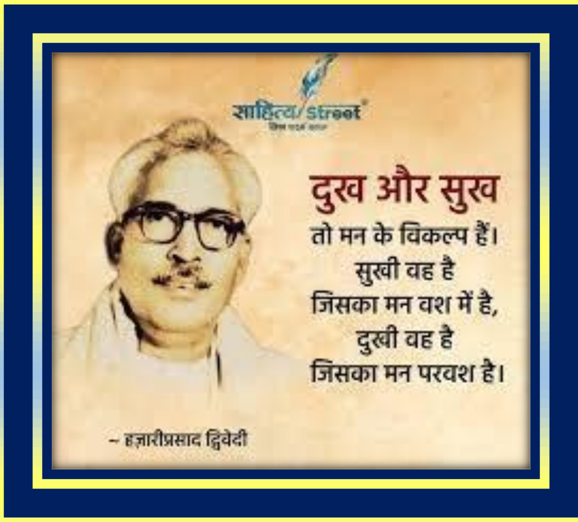

पेड़ की छाँव

पेड़ अपनी छाँव में कभी नहीं बैठता।

उसकी छाँव में बैठते हैं कुछ स्कूली बच्चे;
और सामान बेचने आए बंजारे सौदागर।
बैठता है एक किसान, अचार और रोटी पाने।
पेड़ की छाँव में खाट ढाए, अम्मा बैठती हैं;
बाँस के पतले हथ-पंखे से हवा झोलती हुई।

पेड़ की सुदृढ़तम डाल पर डाले जाते हैं झूले।
इसकी समिधाऐं एकत्रित कर होते हैं यज्ञादि।
पेड़ इसे शोषण करार दे कर क्रांति कर सकता है;
नकार सकता है इस पाखंडी समाज के ढांचे को;
अपने ही वृक्षत्व का समूल नाश कर सकता है;
क्रांति की पूर्णाहुति में सर्वस्व स्वाहा हो सकता है।

वह यह सब कर सकता है।
बस अपनी छाँव में नहीं बैठ सकता।

मृदुल शर्मा
शोधार्थी
अंग्रेजी विभाग

बच्चे

बच्चे होते हैं बड़े शैतान,
लेकिन बच्चे,
होते हैं मन के सच्चे,
आदतों के अच्छे,
शैतानियाँ करना है इनका काम,
घर-घर, गली-गली की दीवारों
पर लिखना है इनका नाम।

यह शैतान,
होते हैं बड़े तूफान,
निवास करते हैं,
इनमें भगवान,
लेकिन होते हैं यह थोड़े नादान,
इसलिए रखें इनका ध्यान,
दे इनको सही ज्ञान ,
करें इनका सम्मान।
नहीं होना चाहिए इनका शोषण ,
मिलना चाहिए इन्हें सही पोषण,
क्योंकि भविष्य में होंगे ,
यही बच्चे हमारे देश की पहचान,
यही है भविष्य के नेता,
और यही है अभिनेता,
कुछ होंगे इनमें से,
देश के जवान,
कुछ अध्यापक बनकर,
बांटेंगे ज्ञान ,
तो कुछ बनेंगे कलाकार महान ,
बच्चे ही होंगे कल की शान ,
करेंगे यही देश का यही नवनिर्माण।।

ललित कुमार
स्नातकोत्तर
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

तुलता इश्क तराजू में

चाँद तारे का वादा नहीं,
मैं, मैं हूँ कोई राजा नहीं।
निहारता अकेला, मैं ही नहीं,
शायद ये हक अभी तय नहीं।

पाना, मिलना सब स्वप्न है,
तेरी चाहत मुझमें दफ़न है।
ना पा सकते तो क्या हुआ,
तू दिखते ही जान-ए-जानां हुआ

साफ है तस्वीर मन के परदे पर,
उसे उतारते कोरे कागज़ पर।
मगर कैसे लड़ूँ अपनी सीमाओं से,
कैसे छुपाऊँ शमा परवानों से।

ऐसा नहीं कि काबिलियत नहीं,
पर सिर्फ चाहत ही काफी नहीं।
रूप, रुतबा, रियासत के जमाने में,
इश्क़ तुलता समाज के पैमाने में।

शायद, अगर, मगर इनका कोई अंत नहीं,
जन्म, मरण, और इश्क़ किसी के बस नहीं।
ज़िंदा लाश बन चलते, मार सारे ख्वाब अपने,
ऐसे लटकते हैं फंदों पर आशिक़ी के सपने।

महेश कुमार 'गुमनाम'
विद्यार्थी,परास्नातक
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

फ़रोज़ाँ इश्क़

फ़रोज़ाँ इश्क़ रोशनी फैला रहा
इस संसार को पागल बना रहा

फिर से मौसम-ए-बहर है जो
पेड़ो को फूलों से सजा रहा
फ़रोज़ाँ इश्क़ रोशनी फैला रहा

किसी समय बरबाद थे
अब फिर से आबाद है
उस बँधी ज़िन्दगी से
अब हम तो आज़ाद है

आते रहे गम होते रहे बदनाम
लेकिन अब रोने का बहाना रहा
फ़रोज़ाँ इश्क़ रोशनी फैला रहा

हो गया सवेरा यहाँ
जुगनू - जुगनू जोड़ कर
हमने फैला लिए पंख
मुख आसमां की और मोड़ कर

जीने की तमन्ना बढ़ गई है
क्यूँकि मरने का बहाना ना रहा
फ़रोज़ाँ इश्क़ रोशनी फैला रहा

डालेश शर्मा
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

नव संवत्सर का स्वर

नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया
नव जीवन की उमंग मुट्ठी में है, लाया!
धरती माँ ने गोदुली में इक, नन्हा लाल है पाया!
जो भारत माँ की है, संतान कहलाया!
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया

भोर हुई रंग-बिरंगी, पक्षियों ने है स्वरगुनगुनाया
वृक्षों ने हँसना सीखा, व्योम ज़रा महकाया!
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया
शिव सत्ता के बोध से, निर्मल है आज संसार बना,
आध्यात्मिक ऊर्जा से भरकर, तन-मन आह्लादित हो आया
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया
शीतल वायु ने रस भरा, वन की सूनी बाहों ने भी
आज फूल है पाया,
नव संवत्सर है आया नव संवत्सर है आया

चैत्र माह के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा में,
ब्रह्मा जी ने है,
सृष्टि का इतिहास रचाया
भारत राष्ट्र ने भी महोत्सव है मनाया
नव संवत्सर है आया,नव संवत्सर है आया

हर घर वसंत है, हुआ
श्री रामचन्द्र जी का राज्यअभिषेक हुआ,
नदियों ने भी नवीन ठौर है, पाया
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया
माँ दुर्गा पूजा का महानतम युग है आया
घर-घर उपहार है लाया!
आखिर! उपेक्षित स्त्री के भी पूजे जाने का दिन है
आया
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया
मानवता की राह दिखाने,
नवीन एक संकल्प है लाया,
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय ने भी, उड़ान है,
मनाया
नव संवत्सर है आया, नव संवत्सर है आया

अंशु कुमारी
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

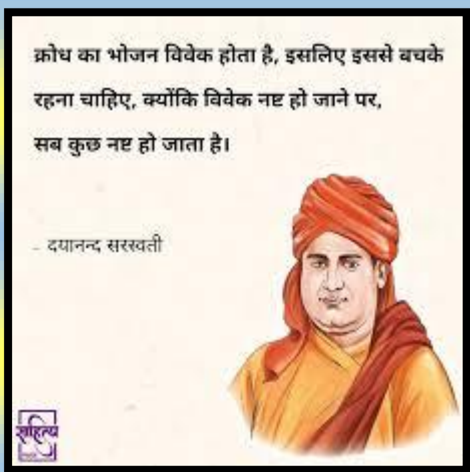

हर कदम पर जीत होगी

हर कदम पर जीत होगी, यह संकल्प मेरा,
कभी नहीं रुकूंगा, यही है प्रण मेरा।
हिम्मत से आगे बढ़ूंगा, मुश्किलें लाख आएं,
सपने होंगे पूरे मेरे, चाहे जो भी राह में आए।

तुफान से लड़ूंगा, बारिश से न डरूंगा,
अंधेरों में भी रौशनी ढूँढूँगा।
कभी भी हार नहीं मानूँगा,
खुद से आगे बढ़ते रहूँगा।

विफलताओं से सीखकर, मंजिल को पाया,
हर कड़ी राह में कभी न पछताया।
सपने जो देखे थे, उन्हें साकार करूँगा,
हार नहीं मानूंगा, मैं जीत हासिल करूँगा।

दुनिया कहे चाहे कुछ भी,
मैं अपनी राह पर बढ़ता जाऊँगा।
कभी भी न थकूँगा, न रुकूंगा,
मुझे मेरे मंजिल तक पहुँचाने के लिए।

सपनों की सच्चाई, मेहनत से होगी पूरी,
कभी न थमूँगा, अपनी दुनिया होगी अजीब।
सपने जो देखे थे, उन्हें पूरा करूँगा,
हार नहीं मानूंगा, मैं
जीत हासिल करूँगा

अमन कुमार चौधरी
विद्यार्थी
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केंद्र

संघर्षशील विद्यार्थी

राह कठिन है, फिर भी निरंतर चलता जाता हूँ,
सपनों की लौ जलाकर, हर दिन संघर्ष करता हूँ।

सुबह की नींद त्याग, किताबों में खो जाता हूँ,
रात के अँधेरे में दीपक-सा जलता हूँ।
मेहनत की कठिनाइयों को
अमृत समान मानता हूँ,
हर चुनौती को मुस्कुराकर पार कर जाता हूँ।
कभी असफलता मिलती, तो मन व्यथित हो जाता है,
पर उम्मीद के पंखों से,फिर नए सपने सजोता हूँ।

मंजिल भले ही दूर हो, पर थककर रुकुंगा नहीं,
संघर्ष मेरा पथ है, हार से झुकूँगा नहीं।

जो आज तप रहा हूँ, कल उजाला बन जाऊंगा,
मेहनत की इस आग में, सोने-सा निखर जाऊंगा।

अक्षय कुमार
जनसंचार एवं नवीन मीडिया
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय

सर्वेभवन्तु सुखिनः...

मैं जो कण मात्र हूं उस असीम ब्रह्मांड का

जिसका न आदि है न अंत जो है दिग्दिगंत

अनगिन आसमानों में गैलेक्सियों के गुच्छे

मानों एक बालक अनन्त काल से खेल रहा है

बुलबुले उड़ाने का खेल

उस असीम विस्तार और अनन्त काल के

मात्र कण सा क्षण सा मैं मनुष्य

न जाने किस परम का पूंजीभूत रूप

समाया है मेरे भीतर

कौन जगाता है वहां जिज्ञासाओं का जंजाल

मुझे खोजना है मुझे जानना है

मानों एक बूंद मथ रही हो अपने भीतर सागर

मैं चेतना का धागा मैं प्रज्ञा का प्रकाश

पिरो लेना चाहता हूं नक्षत्रों की माला

मैंने ही खाए थे शबरी के झूठे बेर

मानव तो क्या वानर, रीछ,गिद्ध को भी भाई कह

मैत्रीभाव से गले लगाया

यशोदा के हाथों माखन खाया और पार्थ की पीड़ा

देख

युद्धक्षेत्र में कुरुक्षेत्र में गीता को गाया

वह मैं ही था जिसने जाना अनलहक़

वहीं नूर का झरना फूटा था मेरे भीतर जब तृप्ता

ने नानक कह गले लगाया

मेरे भीतर बुद्ध की करुणा,महावीर का तेज

ये युद्ध, घृणा, धोखा अहम, बर्बरता ये तो मैं नहीं हूं

क्योंकि जिसके होने से तुम मनुष्य हो

ये उस मनुष्यता की मौत है

मैं ज्ञान मैं विज्ञान मैं अध्यात्म का आव्हान

निकला हूं ढूंढने इस ब्रह्मांड का मूल

जो है सद्चित आनंदरूप ओ अनंत आसमान

मैं कण मात्र करता हूं तुम्हारा आव्हान

कि जिंदा रहे करुणा, मैत्री, प्रेम, विनय, हंसी और

मासूमियत

ज़िंदा रहे इंसानियत मैं,तुम , ये ,वो सभी

आओ हम फ़िर फ़िर गाएं और गाते ही जाएं

सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वसंतु निरामया सर्वे

भद्रानीपश्यंतु मां कश्चित दुःख भगभवेत।

स्वस्तिक
बी.टेक. विद्यार्थी

मेरी बात सुनोगी ना दुनिया?

दुनिया अपनी वापसी में है। अपनी वापसी से पहले वाले भाग में सबसे पहले वो अपनी समस्याओं, चिंताओं में जलेगी फिर धीरे-धीरे मरने लगेगी। उसका सारा आकार, उसके सारे आकाश के साथ जलने के बाद के धुएं से काला पड़ेगा। एक चेहरा जो बहुत सुंदर हुआ करता था, परत-परत करके अपने रोज़ मरने की कोशिश करता हुआ ज़िंदा रहेगा। अब जो नज़र आयेगा वो बहुत गरम राख होगी।

आँखों को जलाने वाला धुंआ होगा। काले रंग का आकाश होगा। उस चेहरे की चमक मर जाएगी। उसकी आँखों के नीचे काले निशान उभर आयेंगे, उसका अपना व्यक्तित्व मरने लगेगा। कोई उसके काले बालों को छूने की तमन्ना करेगा।

कोई सिर्फ़ ख़ामोश रहकर सोचेगा कि उसके पास जीवन में कुछ और साल हों और वो उसमें भी किसी तरह अपने वास्तव को स्वीकार करे। किसी तरह रोक ले दुनिया की वापसी। किसी तरह थाम ले स्वयं के चेहरे की चमक को अपनी आँखों में,और किसी तरह समस्याओं को नियंत्रित करने की क्षमता भी उसमें बढ़ती जाए।

.... आज दुनिया ने गुस्से से पानी का भरा गिलास जमीन पर दे मारा। उसके काँच चारों ओर बिखर गए। शाम तक उस पर मेरे पैर रहे। अभी भी काँच को समेटा नहीं गया है। अभी भी पानी सूखा नहीं है। पैर अभी भी जैसे किसी काँच पर मौजूद हों, उसके निशान क्या हमेशा रहेंगे? दुनिया तुमको किस बात का गुस्सा आया था, अपनी वापसी का? अपनी चमक के कम होने का? अपनी आँखों के काले होने का? अपने आकाश के धुंधले और काले होने का?

या इस बात का कि ईश्वर ने तुम्हारे ऊपर से अपना हाथ हटा दिया है?

तुमको जिस बात का गुस्सा है न दुनिया, मुझे उस बात का दुःख है। दुनिया तुम्हारा गुस्सा मेरे दुःख को ख़त्म नहीं करेगा। वो उसको बढ़ाएगा इतना कि पाप की तरह दुःख का भी अगर कोई घड़ा होता होगा तो भर जाएगा और सारा दुःख जमीन पर गिर कर उसको गीला कर देगा। तब जमीन पर मेरे पैर का खून दुःख के पानी के साथ मिलकर गाढ़े से हल्के रंग का हो जाएगा।

.... दुनिया क्या तुमने कभी जलता हुआ जंगल देखा है? जब जंगल जल रहा होता है तब उसके सारे जानवर कहीं न कहीं भागते है। पर उसके पेड़ पौधे कहीं नहीं जा सकते, उनको जलना होता है। उनके पास बचने का केवल एक मार्ग होता है कि अग्नि अपनी क्षमता को ख़त्म कर दे। जिस दिन मैंने जंगल में आग देखी न दुनिया! उस दिन अग्नि ने अपनी क्षमता खत्म नहीं की। सारे पेड़ जल गए। दुनिया तुम्हारे पास तो भागने का अवसर है ना। तुम्हारे पास उड़ जाने का विचार है ना।

'मेरे पास कोई विचार नहीं है दुनिया और अग्नि की क्षमता खत्म हो जाए ऐसा होता मैंने नहीं देखा है दुनिया।'

दुनिया अब तुम गुस्सा ख़त्म करो । मैं जमीन को साफ़ कर देता हूँ। मैं जमीन पर पड़े काँच को इकठ्ठा कर उसे फेंक देता हूँ। देखना एक काँच मेरे पैर में भी चुभा है। वो तुमको ही निकालना है दुनिया। वो काँच तुमको ही निकालना है दुनिया। सुन रही हो ना दुनिया....?
दुनिया भर के लोग हैं, बैठे है, खड़े हैं, दुनिया हम भी लोग हैं? अब भी वैसे हैं?
बताओ हम भी वैसे हैं? तुम दुनिया क्यों हो मेरी आप भी औरों जैसे हैं ।
मेरी बात सुनोगी ना दुनिया?

कमल दीप सिंह
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

सिनेमा समीक्षा

शाम कहाँ है, आये तो कह देना छेनू आया था

हिंदी सिनेमा की व्यावसायिक अंधी दौड़ के मुकाबले जहाँ एक ओर 1969 में कला सिनेमा का प्रादुर्भाव हुआ, जिसने उसके विरुद्ध खड़े होकर एक नए दर्शक वर्ग की तलाश और गढ़ने का काम आरम्भ किया| वहीं दूसरी ओर गुलजार मध्यमार्ग अपनाते हुए कलात्मकता और लोकप्रियता के बीच राह बनाते हुए 'मेरे अपने' लेकर आए। इसे गुलजार की सर्वश्रेष्ठ कृति न भी मानें तब भी यह उनकी रचनात्मकता की आधारशिला जरूर है।

असरानी, पेंटल और डैनी की यह पहली फिल्म है। शत्रुघ्न सिन्हा और विनोद खन्ना की पहचान भी इसने बनाई। शत्रुघ्न को तो इतनी सटीक भूमिका फिर कम ही मिलीं। मीनाकुमारी से तो अपने लगाव का जैसा सदका ही उतारा है गुलजार ने इस फिल्म की भूमिका से। मीना एक वृद्धा की भूमिका में इतनी जबर्दस्त हैं कि सिर्फ उनकी अदाकारी के लिए इसे कई बार देखा जा सकता है। अन्य कलाकार-योगिता बाली, दिनेश ठाकुर, महमूद, असित सेन, लीला मिश्रा, देवेन वर्मा, योगेश छावड़ा, रमेश देव, सीमा, केश्टो मुखर्जी। संगीतकार-सलिल चौधरी और गीतकार तथा पटकथा लेखक स्वयं गुलजार।

इंदमित्र की कथा पर आधारित तपन सिंहा की बांग्ला फिल्म 'आपनजन' का ऐसा पुनर्निर्माण थी 'मेरे अपने', जो आधार फिल्म से किसी भी तरह कमजोर नहीं थीं। जहाँ तपन सिंहा की फिल्म 'नक्सलाइट' आंदोलन को आधार बनाती है, वहीं 'मेरे अपने' हिंदी भाषा क्षेत्रों में छात्र असंतोष को। बिगड़े छात्रों की दो टोलियों का संघर्ष और नेताओं द्वारा उनका शोषण इसमें जीवंत रूप से अंकित किया गया है।

सभी अभिनेताओं ने अपने किरदारों को जीवंत कर दिया है। नेताओं के रूप में असित सेन और महमूद ने कमाल कर दिया है। इसमें गुलजार के चुटीले संवादों ने उनकी बहुत मदद की है। जरा देखिये नेताजी से उनका चमचा कह रहा है- 'जनता अब सोचने लगी है|' तो नेता तुरंत पलटकर कहता है- 'जनता को सोचने मत दो, यदि वह सोचने लगी तो हमें सोचना पड़ जायेगा|' यह कमाल कदम-कदम पर है।

बांग्ला में मीनाकुमारी की भूमिका छाया देवी ने अदा की थी और यहाँ मीना उनको भी पीछे छोड़ देती हैं। गुलजार ने मीना की भूमिका के साथ भावनात्मक उत्ताप भी बड़ी कुशलता से नत्थी किया है। यहाँ वे सिर्फ दिशाहीन युवाओं की संरक्षक नहीं हैं अपितु उनकी भावनात्मक अतृप्ति की पोषक भी हैं।

छात्रों की दिशाहीनता, उनकी सामाजिक-पारिवारिक उपेक्षा और राजनीतिक शोषण इतनी खूबी से सिनेमा में कम ही अंकित हुआ है। यह फिल्म संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर भी गहरा व्यंग्य करती है जिसने आदमी और आदमी के बीच अविश्वास की चौड़ी खाई निर्मित कर दी है। 'हालचाल ठीकठाक है' गीत में उन्होंने अपनी भावना को खूबसूरत शब्द दिए हैं जो युवकों की मनोभावनाओं और आकांक्षाओं को अभिहित करते हैं।

'कोई होता जिसको अपना हम अपना कह लेते यारो पास नहीं तो दूर ही होता लेकिन कोई मेरा अपना' लोकप्रिय गीत था। आज से पाँच दशक पहले आरंभ हुई गुलजार की रचनायात्रा आज भी बदस्तूर जारी है। हालांकि अब वे सबसे बढ़कर गीतकार के रूप में सक्रिय हैं।

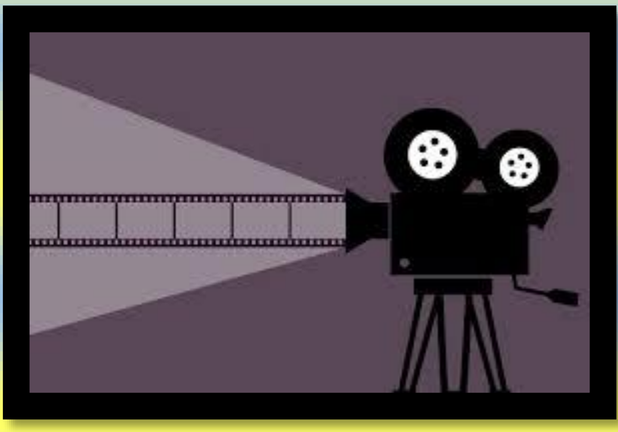

कृष्णा मोहन

शोधार्थी

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

शोधना होगा

घनघोर सन्नाटा, अवसादग्रसित हृदय और अंदर से चीखती अतीत की आवाज़ ले जाती है उस रहस्यमयी दुनिया के भीतर, जहाँ आप स्वयं को एकांतिक मान डूब जाते हैं उस स्वप्न में, जो हुआ क्या वो उचित था? क्या मैं बस उतने ही योग्य हूँ जितना मुझे प्राप्त हो रहा है? ये गत, वर्तमान और अनागत काल निचोड़ के रख देते हैं, वो एक आस जो मुझ पर टिकी है।

शायद ही मैं उसको पूरा कर पाऊं और जो नहीं हुआ तो, तो क्या होगा अगर बेरोजगारी मेरे समक्ष बैठ मुझ पर हंसेगी तो क्या होगा उस पिता के मुख पर, आखिर क्या दे पाऊँगी मैं आंखों में मेरे असफलता रूपी अश्रु या मेरी सफलता की लहराती मुस्कान, रात अपनी होती है। बिस्तर पर बदलते करवट आत्मावलोकन की ओर ले जाते हैं। कभी परिवार का दु:ख मस्तिष्क को शून्य कर जाता है, तो कभी मेरे व्यक्तित्व से मेरे अपने संघर्ष अपनी असफलता का हिसाब मांगते हैं।

सब जान कर भी मेरा संघर्ष अधूरा है। अधूरा रह गया रास्ता, मंज़िल तक पहुँचने की ज़िद बन जाता है और ये अधूरा संघर्ष हार नहीं, बस थोड़ा और सब्र माँगता है।"

नहीं.. नहीं.. मुझे स्वयं लड़ना होगा।

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"

मेरे जीवन के महाभारत में मैं ही सारथी कृष्ण और मैं ही पार्थ हूँ। कभी-कभी ज़िंदगी में हालात कठिन हो जाते हैं, लेकिन वहीं से हमारी असली परीक्षा शुरू होती है। अगर आप अपने लक्ष्य को लेकर ईमानदार हैं और लगातार प्रयास करते हैं, तो सफलता ज़रूर मिलेगी। याद रखिए – **"कड़ी मेहनत का कोई विकल्प नहीं होता।"**

अपने अंदर की ऊर्जा को पहचानिए और आगे बढ़ते रहिए। खुद को प्रेरित करना सीखिए, क्योंकि जब आप खुद को प्रेरित कर सकते हैं, तो कोई भी लक्ष्य दूर नहीं लगता।

ये संघर्ष धूमिल, मुक्तिबोध का नहीं है। ये नया दौर है संघर्ष पन्नों और लफ्ज़ों तक सिमट कर मोहभंग नहीं कर सकते, मुझे अज्ञेय बनना होगा सत्यान्वेषण कर स्वयं को शोधना होगा ताकि अपनी योग्यता प्रमाणित कर पाऊं, अभी मुझे अपने जीवन की पटकथा रचनी है, ताकि मेरा भविष्य किसी अंधेरे में ना सिमट के रह जाए, जीवन के एक पीली शाम से पहले मुझे सफलता के उषा को उगते देखना है, हाँ मुझे एक बार फिर जागना है।

वैष्णवी त्रिपाठी
शोधार्थी
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

सुभद्रा कुमारी चौहान

(वसंत विशेष)

वीरों का कैसा हो वसंत?

वीरों का कैसा हो वसंत?
आ रही हिमाचल से पुकार,

है उदधि गरजता बार-बार,
प्राची, पश्चिम, भू, नभ अपार,

सब पूछ रहे हैं दिग्-दिगंत,
वीरों का कैसा हो वसंत?

फूली सरसों ने दिया रंग,
मधु लेकर आ पहुँचा अनंग,

वधु-वसुधा पुलकित अंग-अंग,
हैं वीर वेश में किंतु कंत,

वीरों का कैसा हो वसंत?
भर रही कोकिला इधर तान,
मारू बाजे पर उधर गान,
है रंग और रण का विधान,

मिलने आये हैं आदि-अंत,
वीरों का कैसा हो वसंत?

गलबाँहें हों, या हो कृपाण,
चल-चितवन हो, या धनुष-बाण,

हो रस-विलास या दलित-त्राण,
अब यही समस्या है दुरंत,

वीरों का कैसा हो वसंत?
कह दे अतीत अब मौन त्याग,

लंके, तुझमें क्यों लगी आग?
ऐ कुरुक्षेत्र! अब जाग, जाग,
बतला अपने अनुभव अनंत,
वीरों का कैसा हो वसंत?

हल्दी-घाटी के शिला-खंड,
ऐ दुर्ग! सिंह-गढ़ के प्रचंड,

राणा-ताना का कर घमंड,
दो जगा आज स्मृतियाँ ज्वलंत,

वीरों का कैसा हो वसंत?
भूषण अथवा कवि चंद नहीं,

बिजली भर दे वह छंद नहीं,
है क़लम बँधी, स्वच्छंद नहीं,

फिर हमें बतावे कौन? हंत!
वीरों का कैसा हो वसंत?

विद्यावन्तंयशवन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।

रूपम् देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ।।